

मेरे गीत तुम्हारे गीत

डा० वेद कुमारी
डा० राम प्रताप

मेरे गीत तुम्हारे गीत

(हिन्दीकवितासङ्ग्रह)

डॉ० वेदकुमारी

प्रोफेसर तथा यू० जी० सी० नैशनल फैलो

सं० वि० ज० वि० वि०

डॉ० रामप्रताप

प्रोफेसर

संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय

जम्मू तवी।

प्रथम संस्करण सन् 1987

प्रकाशक : ऋचा प्रकाशन
173, रघुनाथपुरा
जम्मू तवी

मूल्य 15 रु०

मुद्रक : सुदेश प्रिण्टर्ज़,
हरिसिंह नगर, रिहाड़ी कालोनी
जम्मू तवी-180001

MERE GEET TUMHARE GEET

(A collection of Hindi Poems)

By

Dr. Ved Kumari

Dr. Ram Pratap

Published by :

Richa Prakashan
173, Raghunath Pura
Jammu Tawi-180001

Price : Rs. 15/-

अनुक्रमणिका

---

1. * ताराचिह्न से अङ्कित कविता वेदकुमारी रचित
2. □ वर्गचिह्न से अङ्कित कविता रामप्रताप रचित

उदयपुर विश्वविद्यालय के
आदर्श शिक्षकयुगल
आदरणीय भाई ओजस्वी जी
तथा
आदरणीया भाभी चन्द्रलता जी के
करकमलों में
सादर समर्पित

वेदकुमारी
रामप्रताप

प्राक्कथन

जम्मू कश्मीर प्रान्त के अनेक कवियों और लेखकों ने राष्ट्रभाषा हिन्दी में अनेक कृतियों का सृजन किया है। इनकी रचनाओं ने एक ओर जहाँ इस राज्य में हिन्दी को महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाया है वहाँ दूसरी ओर इसके साहित्य की कविता, कहानी और उपन्यास आदि अनेक विधाओं की पूर्ति करके प्रशंसनीय कार्य किया है।

मेरे गीत तुम्हारे गीत–हिन्दी कविताओं का एक लघुसङ्कलन है। यह संस्कृत के दो प्रकाण्ड विद्वानों की उत्कृष्ट कृति है। डा० वेद-कुमारी का संस्कृत साहित्य और भाषाविज्ञान के अनुसन्धान के क्षेत्र में उच्च स्थान है। इसी प्रकार डा० रामप्रताप ने सस्कृत काव्य तथा काव्यशास्त्र के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है। इन्होंने एक साथ और अलग अलग देवभाषा संस्कृत तथा हिन्दी से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। यह कवितासङ्ग्रह इन दोनों की संयुक्त रचना है। संस्कृत में भी इन्होंने ऊर्मिकानामक कवितासङ्ग्रह लिखा है। सामान्यतया जो व्यक्ति एक भाषा में ऊंचा स्थान प्राप्त करते हैं उनकी दूसरी भाषा के साहित्य में कम ही रुचि होती है। पर ये इस नियम के अपवाद प्रतीत होते हैं। सरस्वती के इन उपासकों ने इन कविताओं द्वारा हिन्दीसाहित्य की श्रीवृद्धि की है। इनका यह प्रयास सराहनीय है।

प्रस्तुत सङ्कलन में सङ्कलित ये गीत और कवितायें दो कविहृदयों से निकले हुए उद्‍गार हैं। इनमें मधुरता है और सरसता भी है। हृदय की धड़कन और तड़पन है। यहाँ मिलन की आतुरता और विरह की कसक दोनों के दर्शन होते हैं। संयुक्तवियुक्ता नायिका की दशा का

यह मार्मिक चित्रण बड़ा सहज सा लगता है—

मैं चली पिया से मिलने को
आया है उनका आमन्त्रण ।
अब व्याकुल मेरे प्राण हुए
उत्कण्ठित हैं मेरे तन मन ॥[1]

विरह की घड़ियों में प्रेमी का पागलपन कालिदास के मेघदूत के यक्ष की दुर्दशा का स्मरण करा रहा है—

तुमको हम रोज़ बुलाते हैं जब शाम का सूरज ढलता है
और दौड़ के खोजा करते हैं जब रात का चाँद निकलता है
पागल हो जाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है[2] ॥१५॥

देश पर बलिदान होने की प्रेरणा इस प्रकार दी जा रही है—

कोटि जन ने प्राण दे पाया तुम्हें
प्राणदायक पर्व तुम आते रहो ।
भूमिका बलिदान की तुमसे जुड़ी
नित नये अध्याय लिखवाते रहो[3] ॥१॥

इस प्रकार मेरे गीत तुम्हारे गीत रूपी काव्यसरिता में अनेक भावलहरियों का समावेश किया गया है । मुझे आशा है कि इस रचना को हिन्दी जगत् में समुचित आदर मिलेगा ।

नई दिल्ली
25-1-86

धर्मचन्द्र प्रशान्त
संसत्सदस्य
(राज्यसभा)

---

1. मेरे गीत तुम्हारे गीत पृ० १
2. यही, तुम्हारी याद पृ० ११
3. यही, स्वतन्त्रतादिवस पृ० ६१

भूमिका

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कभी कहा था—रचनाजगत् में मौलिकता कहीं नहीं होती। सभी कुछ पुरातन होता है।

तब फिर 'कला' क्या है? गुरुदेव ने कहा—पुरानी चीज़ को नये ढंग से प्रकट करने का नाम ही 'कला' है।

इस कवितासग्रह के प्रतिपाद्य विषय भी नूतन नहीं हैं—यह सही है, परन्तु जिस शैली में इन कविताओं को अभिव्यक्ति दी गई है—वह अनूठी है।

झूठे प्रदर्शन और अत्युक्ति से रहित, शब्दाडम्बरहीन ये कवितायें दुरधिगम्यता से कोसों दूर खड़ी हैं।

लौकिक भाषाओं के अतिरिक्त, एक और भी भाषा होती है—कविमन की भाषा। इसी मानसिक भाषा में सिरजे इस संग्रह के सारे 'भाव', किसी स्वच्छ सरोवर के निर्मल जल में प्रस्फुटित कमल कुमुद सरीखे, अपनी सरसता और सहज सुन्दरता के कारण अनायास ही अन्तस्तल का स्पर्श कर लेते हैं।

यह सही है कि ये कवितायें किसी संघर्ष को जन्म नहीं देंगी। नये मानदण्ड और नये मूल्य भी स्थापित नहीं करेंगी। तथापि मेरा कहना है कि—यह महज़ कोरी तुकबन्दी नहीं है—यह अवश्य 'कविता' है। यह 'कविता' सायास नहीं रची गई है। यह 'कविता' तो स्वतःस्फूर्त होकर हृदयनिर्झर से प्रवाहित हुई है। इस कविता का इतना ही परिचय काफ़ी है।

अपनी कुछ खामियाँ और कुछ विशेषतायें लिये हुये, अथ से इति तक प्रसादगुणमयी, छोटी बड़ी ये कवितायें अपना अलग थलग एक मनोहर अस्तित्व स्थापित करने में समर्थ सिद्ध हुई हैं।

दम्पतिकविद्वय कोई ख्यातनामा काव्यरचनाकार नहीं हैं पर ये दोनों ही एक विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित प्रोफेसर हैं। अपने विषय के प्रकाण्ड पण्डित हैं। अतिशय उदारचेता, सहृदय, भावुक और साधुप्रकृति के प्राणी हैं। बुद्धिजीवियों में ये दोनों इसी रूप में जाने जाते हैं। कविता तो ये स्वान्तःसुखाय ही लिखते रहे हैं और अपने इस मधुर प्रयास में भी वे सफल सिद्ध हुये हैं। डॉ॰ रामप्रताप वेदालंकार मेरे प्रिय शिष्य हैं—यह मेरा सौभाग्य है।

आचार्य मम्मट ने काव्य के जो प्रयोजन गिनाये हैं, उनमें सर्वोपरि महत्वशील है—सद्यः परनिर्वृतिः- तत्काल आनन्दप्राप्ति। मेरा विश्वास है—यह लघु कवितासंग्रह सुधी पाठकों को एक हलका हलका सा आनन्द अवश्य प्रदान करेगा। इसमें ही इसकी सफलता, और इसमें ही इसकी सार्थकता निहित है।

५/१३१ त्रिपुरभैरवी,
मीरघाट वाराणसी
२४-१-८६

द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण'

अपनी ओर से

मेरे गीत तुम्हारे गीत नामक इस कवितासङ्ग्रह में छोटी बड़ी सत्ताइस कवितायें हैं। इनकी रचना समय समय पर विभिन्नपरिस्थितिजन्य मन:स्थितियों में रहते हुए की गई है। इनका प्रयोजन केवल स्वान्त:सुख तक ही सीमित था। पर अपने ऊर्मिका नामक संस्कृतकवितासङ्ग्रह को जब प्रैस में छपवाना प्रारम्भ किया तो मित्रों के आग्रह से इन्हें भी छपवाने का विचार बन गया। इस प्रकार हमारी हिन्दी कविताओं ने भी वर्तमान मुद्रित रूप प्राप्त कर लिया है।

श्री धर्मचन्द्र प्रशान्त संसत्सदस्य (राज्यसभा) जम्मू कश्मीर राज्य के जाने माने पत्रकार एवं साहित्यकार हैं। न केवल इस प्रान्त की अपितु भारत के दूसरे प्रान्तों की भी अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संस्थाओं के साथ इनका सम्बन्ध जुड़ा हुआ है। इन्होंने डोगरी और हिन्दी में कई मौलिक कृतियाँ लिखकर इन भाषाओं को अपना सक्रिय योगदान दिया है। मेरे गीत तुम्हारे गीत का प्राक्कथन लिखकर इन्होंने हमारे उत्साह को बढ़ाया है। अतः हम इनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

वाराणसी के प्रख्यात प्राध्यापक, काव्यशास्त्री एवं कथाकार श्री द्विजेन्द्रनाथ मिश्र निर्गुण सरस्वती के महान् उपासक हैं। ये सतत अध्ययन अध्यापन में रत रहते हुए स्वय तो उच्च श्रेणी के कथासाहित्य

का सृजन करते रहे हैं पर साथ ही पुरानी और नई पीढ़ी के अनेक विद्वानों, कवियों और लेखकों को भी साहित्य साधना के लिए प्रेरित करते रहे हैं। इनकी हिन्दी सेवाओं से प्रभावित होकर उत्तरप्रदेशीय हिन्दीसंस्थान ने इनको सर्वोच्च हिन्दी पुरस्कार देकर सम्मानित किया है। हमारे ऊपर इनका सदैव विशेष अनुराग एवं आशीर्वाद रहा है। हमारी इस लघु कृति की इन्होंने भूमिका लिखने की कृपा की है। एतदर्थ हम इनके अनुगृहीत हैं।

श्री ओ० पी० शर्मा सारथी ने हिन्दी, उर्दू, डोगरी और पंजाबी के साहित्य को अपनी कृतियों से समृद्ध किया है। साहित्य एकादमी दिल्ली का भी इन्हें साहित्यिक पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इनमें कलाकार और चित्रकार का मणिकाञ्चन संयोग है। इन्होंने आवरण पृष्ठ का भावपूर्ण चित्र बनाने का कष्ट किया है। अतः हम इनके बड़े कृतज्ञ हैं। उर्दू के मशहूर शायर श्री बेताब जयपुरी ने भी कुछ उपयोगी सुझाव देकर हमारा उपकार किया है।

अन्त में हम सुदेश प्रिण्टर्ज़ के अधिकारियों को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने बड़ी लगन के साथ इस पुस्तक का मुद्रण किया है।

राष्ट्रभाषा हिन्दी माँ के पवित्र चरणों में अपने इन काव्य-प्रसूनों की प्रथम अञ्जलि समर्पित करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। यदि सहृदय सामाजिकों को इन कविताओं को पढ़कर थोड़ा भी आनन्द मिला तो हमें मनस्तोष प्राप्त होगा।

संस्कृतविभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
महाशिवरात्रि 87

वेदकुमारी
रामप्रताप

आमन्त्रण

मैं चली प्रिया से मिलने को
आया है उनका आमन्त्रण ।
अब व्याकुल मेरे प्राण हुए
उत्कण्ठित हैं मेरे तन मन ॥१॥

कर ली है बड़ी प्रतीक्षा अब
मिलने का अवसर आया है ।
गर्मी का भीषण ताप मिटा
पुरवा का झौंका आया है ।
अब अग अंग शीतल मेरा
पाकरके अपना जीवन धन ॥२॥

दुनिया के कामों में कैसे
अब मेरा मन लग पायेगा ।
कैसे मैं इसको रोकूंगी ।
क्या रोके से रुक जायेगा ।
मिलने को आतुर होता है
अब तेज़ हुई इसकी धड़कन ॥३॥

गंगा की डुबकी से सबका
तन मन निर्मल हो जाता है ।
विरहानल में भी जल जलकर
मानव कुन्दन हो जाता है ।
मुझको निष्पाप बनाता है
उनके वियोग में यह रोदन ॥४॥

मैं दूर रही प्रिय से लेकिन
फिर भी वे मेरे पास रहे ।
तब दूरी भी मिट जाती है
प्रिय का जब मन में वास रहे
युगलों को बाँधा करता है
ये प्रणय सूत्र का दृढ़ बन्धन ॥५॥



परिचय

क्षण भर के परिचय से प्रिय तुम
लगे मुझे पहिचाने से।
जन्म जन्म का सहचर मानो
आन मिला अनजाने से ॥१॥

सहज सरलता से तुमने आ
मुझे प्रणय उपहार दिया।
पल भर को पलकें उठीं और
नयनों ने स्वीकार किया ॥२॥

सोई अभिलाषा जाग उठी
इस सूने मन में ऐसे।
काले मेघों में चमक उठी
विद्युत् की रेखा जैसे ॥३॥

इच्छा

बोलो प्रियतम तुम क्या मेरे मन के सम्बल बन पाओगे।
जीवन पथ में काँटे भी हैं क्या चुभने पर मुस्काओगे ॥१॥

मैं तुम्हें यदि सुख दे पाई तो धन्य समझ लूंगी निज को
क्या तुम सुख की भी चाह लिये दुःखों के भार उठाओगे ॥२॥

जाने कब इस जीवननभ में सङ्कट के बादल घिर आयें
आ करके हमें सतायेंवे दिनरात बड़ी भवबाधायें
नारी की परीक्षा होती है अग्नि में बारम्बार यहाँ
अपनी इस साध्वी सीता का क्या प्रियतम साथ निभाओगे ॥३॥

बस इच्छा एक यही मेरी जीवन भर दोनों साथ रहें
अपनी इस लम्बी यात्रा में गाते दोनों दिन रात रहें
खट्टे मीठे तीखे कड़वे सारे रस पीने पड़ते हैं
क्या विष और अमृत को प्रियतम समरस होकर पी पाओगे ॥४॥



बुरा हाल

ज़िसने मधु का स्वाद चखा हो उसके बिना रहेगा कैसे ?
पर मधुशाला की राहों में चलना दूभर हो जाता है ॥१॥

धारा का आनन्द कभी क्या मिलता है सरिता के तट पर ?
पर धारा में गिर कर बहना बहुत कठिन ही हो जाता है ॥२॥

जलते दीपक की लौं प्यारी लगती है पर फिर भी उसमें
परवाना तो जल जल कर ही बस भस्मपुञ्ज हो जाता है ॥३॥

पिला प्यार की एक घूंट तुम प्यास अनोखी जगा गये हो।
तुम नहीं जानते प्यासे का बुरा हाल ही हो जाता है ॥४॥



मिलन

अब विरहकाल का अन्त हुआ
शुभ घड़ी मिलन की आई है
इस कालरात्रि के जाने पर
ऊषा की लाली छाई है ।।१।।
निज भेद बुद्धि बिसरा करके
यह अवसर पास बुलाता है
हम तुम दोनों हैं एक सदा
यह मधुरमन्त्र समझाता है ।।२।।
प्रेम की संकरी गलियों में
अद्वैतभाव ही चलता है
दूरी सारी मिट जाती हैं
जब प्यार दिलों में पलता है ।।३।।
एकाकी राही राहों में
चल चलकर थक सा जाता है
संगी साथी पाकर अपना
उसका मन लग सा जाता है ।।४।।
मन चाहे प्रेमी को पाकर
गौरी ने तप को छोड़ दिया
अपने आपे को बिसराकर
शङ्कर से नाता जोड़ लिया ।।४।।
अब चाह भरी इस वेला में
मन चाहा तुम श्रृङ्गार करो
चिरसञ्चित अपने मधुर मधुर
सारे सपने साकार करो ।।६।।



पागलपन

मैं तुमको दूर समझ बैठी
ये कैसा मेरा पागलपन ।।१।।

मेरे ये कान यहाँ सुनते
वे प्यारी बातें सारी ही।
ये नयन निमीलित हो भरते
वह छवि तुम्हारी न्यारी हो।
मन ही मन बातें कर तुमसे
मिट जाता मेरा सूनापन ।।२।।

मुख के बोलों से दूर अलग
होती है हृदयों की भाषा।
बिन बोले ये बतलाते हैं
अपने भीतर की अभिलाषा।
फिर सहजभाव से बढ़ता है
दो अनजानों में अपनापन ।।३।।
अपनी सुध बुध खो देती हूं

जब याद किया करती तुमको।
मानसपट पर दीखा करता
प्रिय सुन्दर वह मुखड़ा मुझको।
तब भाग कहीं ये जाती है
मेरे व्याकुल मन की तड़पन ।।४।।

हर दूरी दूरी हुआ करती
जब दो दिल घुल मिल जाते हैं।
तब द्वैतभाव के मिटने से
वे बहुत पास आ जाते हैं।
यह बात समझने से मेरा
अब दूर हुआ है मूरखपन ।।५।।



सब भाया करते हैं

नैनों से नैन मिला करते दिल भी मिल जाया करते हैं।
राहों में राही को पाकर राही मुस्काया करते हैं ।।१।।

नभ में जब सूरज आ करके बस आग ही आग उगलता है।
वह आग बड़ी शीतल लगती जब दिल में प्यार मचलता है।
अपने प्यारों को ये साथी किस्मत से पाया करते हैं ।।२।।

सावन के बादल आ आकर बस प्यार की वर्षा करते हैं
पूरब के पवन के झौंके भी सबको अनुरागी करते हैं।
हरियाले मौसम भी दिल को मदमत्त बनाया करते हैं ।।३।।

चन्दा की ठंडी किरणों से सुखदाई बूंदें झरती हैं।
पूनम की उजली वे रातें जीवन में मस्ती भरती हैं।
तब उनमें मस्त हुए प्रेमी गीतों को गाया करते हैं ।।४।।

जब ठंडे ठंडे मौसम में वे सर्द हवायें चलती हैं।
तब दिल को घायल करने को बेदर्द अदायें चलती हैं।
अपने अपनों को अपनाकर मन में हरषाया करते हैं ।।५।।

पतझड़ जब वो आ जाती है पेड़ों से पत्ते झड़ते हैं।
ऊपर ऊपर से प्रेमी तब लड़ते और झगड़ते हैं।
यों आपस में लड़ लड़ कर ही दिल को बहलाया करते हैं ।।६।।

मतवाली प्यारी वह कोयल जब पञ्चम सुर से गाती है।
अपनी मीठी उन तानों से वह प्यार की प्यास जगाती है।
तब प्यार के प्यालों को प्रेमी अक्सर खनकाया करते हैं ।।७।।

पशु पक्षी वृक्ष तथा लतिका सब उनको रोज़ चिढ़ाते हैं।
जो प्रिय से दूर रहा करते ये मिलकर खूब सताते हैं।
अपना प्यारा गर पास रहे मन को सब भाया करते हैं ।।८।।



स्पर्श

प्रिय हल्का ये स्पर्श तुम्हारा मुझमें प्रकाश भर देता है।
शब्द पुराने उस प्रकाश में नये अर्थ लेकर आये हैं ॥१॥
मिलन वियोग उत्कण्ठा आशा सबकी परिभाषा जानी है।
हरियाले और सूखे मौसम नये रंग लेकर आये हैं ॥२॥
शब्दमात्र से परिचित थी मैं आ पहुंचे तुम अर्थ सुझाने
गहरे रहस्य सभी जीवन के धीरे धीरे खुल पाये हैं ॥३॥
तुमसे भेंट प्रणय की पाकर सब कुछ ही मैंने पाया है।
तुम्हें सुनाने को ही मैंने गीत प्रणय के ये गाये हैं ॥४॥



रहस्य

अधर में पिपासा है
नयनों में स्पन्दन है
मन में उत्कण्ठा है
तन में कम्पन है
ऐसा क्यों होता है ?
कभीं नहीं जाना था ॥१॥
जीवन की राहों में
राही भी आता है
बातों ही बातों में
अपना बन जाता है
ज़बान के जादू को
कभी नहीं माना था ॥२॥
प्रियजन के वियोग में
क्यों मन यह रोता है ?
और फिर संयोग में
आपे को खोता है
रहस्य मेरे लिए
अब तक अनजाना था ॥३॥



मेरा गीत

आली गीत सुनो तुम मेरा ।

मैंने आज गीत अपने में नहीं प्रणय के स्वर को डाला ।
विरहिन के आँसू चुन चुनकर नहीं बनाई मुक्तामाला ।
पीड़ित मानव का है इसमें क्रन्दन दिल दहलाने वाला
और बनेगा यही गीत अब महाक्रान्ति भड़काने वाला ।
क्रान्ति की भीषण ज्वाला में जल जाता पापों का डेरा ॥१॥

देखो चारों ओर हमारे कैसा घोर तिमिर यह छाया
जगती के कोने कोने में इसने अपना रौब जमाया
मेरा भी यह गीत हठीला इससे लड़ने को ललचाया
अपने शब्दों के भीतर यह नये प्रकाश को भर कर लाया
गीतों से अब निकल निकलकर नई ज्योति ने तम को घेरा ॥२॥

इसी गीत का स्वर निकला है सूखी हड्डी की रगड़न से
मानव पर होने वाले इस दानव के नंगे नर्तन से
पग पग पर नित देखे जाते स्वाभिमान के इस मर्दन से
अन्त विषमताओं का करने उठे कोटिजन के गर्जन से
इसकी स्वरलहरी को सुनकर आ जायेगा अभी सवेरा ॥३॥



"तुम्हारी याद"

आँखों से आँसू झरते हैं जब याद तुम्हारी आती है।
राहों में आहें भरते हैं जब याद तुम्हारी आती है ।।१।।

पहली ही दीद तुम्हारी से हम मारे खुशी के फूल गये।
मंज़िल की सारी मुश्किल को इक लमहे में ही भूल गये।
अपने को भुलाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ।।२। आँखों से
पाकर तुमको इस दुनिया में इक यार मिला दिलदार मिला
राही की भटकन में हमको रहरौ का सच्चा प्यार मिला
राही को राही मिलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ।।३।। आँखों से

इस दिल के मन्दिर में रहने इक मूरत आपही आई थी
पहले से ख़्याल में आकरके वो बाद में सामने आई थी
मन्दिर को बुहारा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ।।४।। आँखों से

नज़दीक तुम्हारे जब आये तुमने इक राज बताया था
वही मेरे आगे आया है ख्वाबों में जिसको पाया था
सपने भी सत्य निकलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ।।५।। आँखों से

ऊपर के चाँद में जान नहीं पर तुममें दिल की धड़कन है
तुमको चन्दा भी कहने में ये बहुत बड़ी इक उलझन है
उपमान को ढूंढा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥६॥ आँखों से

कितनी ही करवा चौथों से ये उम्र हमारी बढ़ती है
और तुमसे दुआयें पाकर के जीवन में मस्ती चढ़ती है
इनकी ताकत से चलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥७॥ आँखों से

तुमको पाकर के खोया है और खोकर तुमको पाया है
ना जाने कितने जन्मों से ऐसा ही रास रचाया है
बिछुड़े मिल जाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥८॥ आँखों से

तुम जब जब साथ रहा करतीं तो दुनिया और ही होती है
और जब जब दूर हुआ करतीं तो अपनी किस्मत रोती है
तब जीवन ढोया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥९॥ आँखों से

ग़म के मारों के दर्द यहाँ अक्सर यों ही बढ़ जाते हैं
तूफानों के आने से तो नद नाले भी चढ़ जाते हैं
उल्टे सीधे वे चलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१०॥ आँखों से

रौनक बढ़ती इस गुलशन की जब आपकी आमद होती है
बाहर इससे जब जाती हो तो वीरानी सी होती है
हम ये ही देखा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥११॥ आँखों से

ऐसे भी मीत मिला करते जब दूर कहीं वे जाते हैं
आने को मना भी ना करते पर आने में ना आते हैं
ग़मग़ीन बनाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१२॥ आँखों से

हम रखने को तैयार न थे तुम हटने को तैयार न थीं
हम हंसने को तैयार न थे तुम रोने को तैयार न थीं
अब तो बस रोया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१३॥ आँखों से

देवी से जुदा होने पर तो भगवान् भी रोते देखे हैं
इस इश्क की भट्टी में पड़कर पत्थर भी पिघलते देखे हैं
परवाने शम्मा पर जलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१४॥ आँखों से

तुमको हम रोज़ बुलाते हैं जब शाम का सूरज ढलता है
और दौड़ के खोजा करते हैं जब रात का चाँद निकलता है
पागल हो जाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१५॥ आँखों से

नज़रों से दूर हुई लेकिन नज़रों में ठहरी रहती हो
बेतार के तार से मतलब की बातों को करती रहती हो
तुम्हें दिल में निहारा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१६॥ आँखों से

दिल में ही समाई रहती हो सोचें तो बाहर आती हो
तस्वीर तुम्हारी देखें तो भीतर ही उतरती जाती हो
सब ओर ही देखा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१७॥ आँखों से

दिन में तो दिल के ज़ख्मों की तुम खूब सफाई करती हो
और रात को चुपके से इनमें तुम प्यार का मरहम भरती हो
पर फिर भी ये ना भरते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१८॥ आँखों से

मन्दिर में जाकर हमको जब देवी का दर्शन होता है
आँखें तो उन पर होती हैं पर ध्यान तुम्हीं पर होता है
फिर जाप तुम्हारा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥१९॥ आँखों से

तुम होकर गायत्री देवी इस दिल से पाप भगाती हो
और बनकर वीणो देवी तुम संकट भी दूर भगाती हो
तुम को ही पूजा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२०॥ आँखों से

मरना जीना हसना रोना ये साथ सभी के चलते हैं
जो सूरज चाँद निकलते हैं वे बाद में जाकर ढलते हैं
दिल को समझाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२१॥ आँखों से

तुमने भी साथ बिछुड़ने से कहीं चैन नहीं पाया होगा
दिन रात हमें सोचा होगा कभी ख्वाब में ही पाया होगा
ग़म को ये ही कम करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२२॥ आँखों से

सूरत को तेरी बिन देखे अब हमसे रहा नहीं जाता है
जो दर्द दिया है सीने में वो हमसे सहा नहीं जाता है
रो रो के गुज़ारा करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२३॥ आँखों से

दुश्वार हुआ मिलना तुमसे राहों में नदियां नाले हैं
ये गहरे गहरे सागर हैं और पर्वत बरफों वाले हैं
मिलने को बहुत मचलते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२४॥ आँखों से

तुम छोड़ो अपनी निठुराई तुमको अब आना ही होगा
इस उजड़े दिल के गुलशन को फिर से महकाना ही होगा
सङ्कट मिट जाया करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२५॥ आँखों से

आने की राहों में हम तो अब आस लगाये बैठे हैं
और एक झलक ही पाने को हम आँख बिछाये बैठे हैं
दीदार की ख्वाहिश करते हैं जब याद तुम्हारी आती है ॥२६॥



"दिल की पीर"

पीर दिल की अब पिघल कर आँसू बनके बह रही है
ग़म भरी इस दास्तां को आँख ही अब कह रही है ॥१॥

पंख फैलाकर गगन में पंछी वो अब उड़ चला है
लौटने को दे दिलासा नीड को उसने छला है
आ अमावस भाद्रपद की हाय सिर पर चढ़ रही है ॥२॥

महकते उपवन को माली छोड़ करके चल पड़ा है
खिलते फूलों की जड़ों में खौलता पानी भरा है
खाके आँधी के थपेड़े हर कली अब झड़ रही है ॥३॥

राका अपने चाँद को अब छोड़ करके जा रही है
छाया रवि की ओर से मुंह मोड़ करके जा रही है
दो दिलों की प्रीत बस अब गाथा बनके रह रही है ।।४।।

प्यार पा निश्छल तुम्हारा हम खुशी से फूलते थे
अंक पाकर के तुम्हारा कष्ट सारे भूलते थे
बिन तुम्हारे ज़िन्दगी अब आह बनके रह रही है ।।५।।

प्यार अपना दे दिया तो तुमने सब कुछ दे दिया था
दिल हमारा ले लिया तो तुमने सब कुछ ले लिया था
बिन तुम्हारे जिन्दगी अब आह बन के रह रही है ।।६।।

जल बिना मछली तड़पती पर बिना पछी तड़पते
पवन बिन इस भूमितल के जीव व्याकुल हो तड़पते
तुम बिना जीऊं मैं कैसे छटपटाहट बढ़ रही है ।।७।।

मन लगाने मेरी छाया तुम तलक पहुँचेगी कैसे ?
बात भी अब यह हमारी तुम तलक पहुँचेगी कैसे ?
क्या करूं मेरी विवशता घुटन बनके रह रही है ।।८।।

राजमा और सेव का भी रंग बदला दीखता है ।
केसरों की क्यारियों का ढंग बदला दीखता है ।
ज़ुल्म कुदरत के निराले आतमा अब सह रही है ।।९।।

मानसर ये कालसर है डल निगोड़ी दल बदल है
यह तवी भी काली बनकर प्राण लेने में कुशल है
अनल बनकर जम्मू नगरी दाहहेतु दह रही है ।।१०।।

दूर रहने पर भी दिल में तेरी मूरत देखते हैं
रात के सपनों में भी हम तेरी सूरत देखते हैं
प्रेम धारा में पड़ी ये नाव मेरी बह रही है ।।११।।

फ़र्क अब पड़ता नहीं है दूर रहने पर तुम्हारे
कल मिलें या न मिलें पर साथ होंगे हम तुम्हारे
रूह में अब रूह मिलकर एक बनके रह रही है ।।१२।।

तुम हमें पाओ न पाओ हम तुम्हारे साथ रहते
तुम यहाँ आओ न आओ हम उधर ही बात कहते
दोनों पंछी साथ रहते वेद वाणी कह रही है
(द्वासुपर्णा साथ रहते वेदवाणी कह रही है) ।।१३।।

तेरे दर के हैं भिखारी माँगते पर कुछ नहीं हैं
प्रेम धन जब पा लिया तो चाहते अब कुछ नहीं हैं
कामना कोई नहीं अब दिल में बाकी रह रही है ।।१४।।

याद आये गर हमारी आँख में आँसू न लाना।
दिल अगर घबराये तो भी दुःख नहीं अपना बताना।
प्रेम पर हंसने की आदत इस जहाँ को पड़ रही है ।।१५।।

विरहानल में अब मदन का ठहरना सम्भव नहीं है।
प्रेमगङ्गा में अघों का तैरना सम्भव नहीं है।
मेरे मन से सब कलुषता धीरे धीरे कढ़ रही है ।।१६।।

गर मिलें हम तो बताओ बात भी कैसे करेंगे?
दिल के गहरे घाव जो हैं वे कहो कैसे भरेंगे?
दो दिलों में प्रीत अब नासूर बनके रह रही है ।।१७।।

प्राण लौटेंगे हमारे तुम यहाँ आओगी जिस दिन।
खूब चमकेंगे सितारे तुम हमें पाओगी जिस दिन।
काल निर्मित विरह भित्ति जीर्ण होकर ढह रही है ॥१८॥

दूर होवे ये अंधेरा भाग जाये रात काली।
दौड़कर आये सवेरा खिल उठे उषा की लाली।
सूर्य कर छूकर कमलिनी कितने सुख से रह रही है ॥१९॥

लौट आओगे तभी तो बात आगे फिर चलेगी।
पवन का संस्पर्श पाकर जातिलतिका फिर खिलेगी।
अपनी हरिणी पर हरिण की प्रेमदृष्टि पड़ रही है ॥२०॥

हम से मिलने में नहीं अब तुम ज़रा भी देर करना।
देर हो जाये तो फिर भी तुम नहीं अन्धेर करना।
जिन्दगी विश्वास पर ही अब तलक यह चल रही है ॥२१॥

साथ बीतेंगे सभी दिन जब तलक जीते रहेंगे।
खूब छक छक कर निरन्तर प्रेम रस पीते रहेंगे।
प्यार की ही राह चलने को हमारी रह रही है ॥२२॥

लौट आईं तो तुम्हारी देह बन बाती जलेगी।
स्नेह प्रपूरित आत्मा के दीप की लौ तम हरेगी।
शलभ बन मंडराने की बस चाह दिल में रह रही है ॥२३॥



इतिहास

अपने अंदर अब नहीं ये रह रहा ।
दर्द दिल का आँसू बनकर बह रहा ।।१।।

बोलना दिल के लिए मुमकिन नहीं ।
नैन ही मेरी कहानी कह रहा ।।२।।

हाल अब मेरा यहाँ अच्छा नहीं ।
अपने भीतर आप घुटकर रह रहा ।।३।।

जबसे बिछुड़ा हूँ मैं तुमसे ओ सनम ।
गर्दिशों के बीच में ही रह रहा ।।४।।

ग़म ने मुझको जान से मारा मगर ।
जिन्दा जाने फिर भी कैसे रह रहा ।।५।।

टुकड़े टुकड़े इस जिगर के हो गये ।
अब गले में प्राण अटका रह रहा ।।६।।

घण्टों घण्टों बोलकर जो न थकी ।
उस जुबां को ताला लगकर रह रहा ।।७।।

आँख तो दिनरात बस रोती रही ।
कान सुनना बन्द करके रह रहा ॥८॥

मेरी ज़िन्दा लाश को ढोता नहीं ।
पैर मेरा लड़खड़ाता रह रहा ॥९॥

हाथ भी है आजकल हड़ताल पर ।
हाथ पर वो हाथ धरके रह रहा ॥१०॥

तुम बिना अब ज़िन्दगी चलती नहीं ।
बिन दवा के मर्ज बढ़ता रह रहा ॥११॥

दास्ताँ अपनी यहाँ होती शुरू ।
इतना हिस्सा भूमिका बन रह रहा ॥१२॥

दिल की हसरत दिल में ही अब रह गई ।
दूर जब संसार मेरा रह रहा ॥१३॥

आशियाना एक आलीशान था ।
आँधियों से वो बिखरकर रह रहा ॥१४॥

जिसको सींचा और देखा अब्र वही ।
बाग़बाँ का बाग़ उजड़ा रह रहा ॥१५॥

ओठ से लगते ही प्याला गिर गया।
काम पीने का अधूरा रह रहा ॥१६॥

अब तलक साहिल भी मुझको न मिला ।
इस नये दरिया में जब से बह रहा ॥१७॥

चाहता मिलना मगर मैं क्या करूं ?
रास्ता ही बाड़ बनके रह रहा ॥१८॥

ढूँढ़कर जब हाथ कुछ आया नहीं।
मैं अभागा हाथ मलके रह रहा ॥१९॥

अपनी किस्मत पर नहीं कुछ जोर है।
मन ही मन मैं कसमसाता रह रहा ॥२०॥

जब भी तड़पा तब मुझे राहत मिली।
ग़म दवा बनकरके भीतर रह रहा ॥२१॥

मैं भला तुम से कहाँ अब दूर हूँ ?
रात दिन दिल में तुम्हारे रह रहा ॥२२॥

कर रही जो बात तुम बेतार से।
मायने के साथ सुनता रह रहा ॥२३॥

याद मन में जब किया पहुँचा तभी।
वो मेरा इकरार पूरा रह रहा ,।२४॥

अपनी मंज़िल आप ही मिलती रही।
देखो गंगा से समन्दर कह रहा ॥२५॥

उड़ते परवाने शमा के इर्द गिर्द।
हश्र उसका चाहे जो भी रह रहा ॥२६॥

बात आगे की सुनो दिल थामकर।
मेरा किस्सा अब भी बाकी रह रहा ॥२७॥

अब तो मिलने का इरादा कर लिया।
लम्बे अरसे से जुदाई सह रहा ॥२८॥

बिन मिले भी काम चल जाता मगर।
ग़ौर तुम पर ही हमारा रह रहा ॥२९॥

जल्द मिलने की वो आयेगी घड़ी।
अब प्रतीक्षा का सहारा रह रहा ॥३०॥

कैसे सह पाऊँगा मिलने की खुशी।
मसला अपने सामने यह रह रहा ॥३१॥

उतरे दिल से बोझ हो हल्का ये फिर।
इसलिए मैं बात इतनी कह रहा ॥३२॥

पर नतीजा हाय उल्टा हो गया।
मैं परेशां दिल भी भारी रह रहा ॥३३॥

बहुत लम्बी बात फिर भी हो गई।
अब जरा संक्षेप करना पड़ रहा ॥३४॥

इस डगर पर हो निडर जो चल दिया।
मरके भी वो इस ज़मीं पै रह रहा ॥३५॥

राम सीता कृष्ण राधा थे यहाँ।
नाम लैला मजनू का भी रह रहा ॥३६॥

कुन्ज, नगरी और रेगिस्तान में
सिलसिला वो ही पुराना चल रहा ॥३७॥

छक के प्याला ग्राज भी पीते हैं लोग।
स्वाद इसका हद से ज़्यादा बढ़ रहा ॥३८॥

दिल के सौदे ग्राज भी करते हैं लोग।
पर उन्हें ग्रक्सर ही घाटा पड़ रहा ॥३९॥

है नहीं परवाह ग्रागे कुछ भी हो।
कारवाने इश्क चलता रह रहा ॥४०॥

फर्क मरने से उसे पड़ता नहीं।
एक दूजे के लिए जो रह रहा ॥४१॥

ग्राग में इस प्रेम की ग्रब कूदकर।
जान से खिलवाड़ करना पड़ रहा ॥४२॥

ग्रब कहानी है खतम लेकिन यहाँ
बात छोटी सी तुम्हें मैं कह रहा ॥४३॥

हम मिलें या न मिलें चिन्ता नहीं।
हम को तो ऐतबार तुम पर रह रहा ॥४४॥

जो हुई सच्ची कहानी प्यार की।
स्थान उनका बहुत ऊँचा रह रहा ॥४५॥

जब तलक ये चाँद सूरज हैं यहाँ।
यह ग्रमिट इतिहास तब तक रह रहा ॥४६॥



मंज़िल का पता नहीं

रात दिन हम आपको सोचा किये
और दिल में ही बसाये रह रहे ।
आपकी पहली झलक को देखकर
आपके मुश्ताक होकर रह रहे ॥१॥

और क्या देते बताओ आप ही
दिल की दौलत ही हमारे पास थी ।
आप पर इसको लुटायेंगे कभी
यह तमन्ना ही हमारी ख़ास थी ।
पर नहीं मंज़ूर ये सब आपको
अब बड़े मजबूर हो हम रह रहे ॥२॥

प्यार के बदले में पाया प्यार ना
दिल दिया और दर्द बदले में मिला ।
पानी चाही ज़िन्दगी वो न मिली
दी खुशी पर रंज बदले में मिला ।
ज़ोर किसमत पर कहो किसका चला ?
सोचकर ये ज़ुल्म सारे सह रहे ॥३॥

आपको अपना समझ दिल दे दिया
किन्तु रखना आपको आया नहीं
भेंट में दी चीज़ को कोई कभी
फिर से वापिस मांगकर लाया नहीं
आपके कदमों में इसको डालकर
हम बिना इसके इधर ही रह रहे ॥४॥

हम करेंगे आप से हर दम वफा
आप चाहे सारे नाते तोड़िये
फ़िक्र बस हमको रही है आपकी
हम को अपने हाल पर ही छोड़िये
इश्क के दरिया में हम को फेंककर
आप साहिल पर खड़े ही रह रहे ॥५॥

बेरुखी का लेके खंजर हाथ में
घाव मेरे दिल में गहरा कर दिया।
सींचना था आब से जिस बेल को
जड़ में ही तेज़ाब उसकी भर दिया।
फिर भी हमको अब नहीं कोई गिला
आपको बस याद करते रह रहे ॥६॥

कैसी हालत होती है मज़लूम की
ज़ालिमों को सोचना आता नहीं ।
जान अपनी दे रहा कोई अगर
दूसरा उस पर तरस खाता नहीं।
आप पर होता असर इसका नहीं ।
फिर भी हम ये बात करते रह रहे ॥७॥

आपने जो कुछ किया अच्छा किया
हम उमीदें भी करें क्या आपसे ?
आपको सुनने की फुर्सत भी नहीं
क्या फ़साना हम कहें अब आपसे ?
अपनी बर्बादी का हमको ग़म नहीं
हम पै जो बीती उसे हम सह रहे ॥८॥

आपसे शिकवे भी बोलो क्या करें ?
दो दिलों का मिलना मुश्किल बात है
चाहने से भी नहीं मिलता है कुछ
जब तलक किसमत न देती साथ है
रहम मुझ पर आप मत फरमाइए
हम तो अब अपने सहारे रह रहे ॥६॥

प्यार के बदले मिले उसका जवाब
सब जगह ऐसा कभी होता नहीं
पिङ्गला से प्यार मिल जाता अगर
भर्तृहरि ग़मगीन हो रोता नहीं
अपनी मंज़िल का पता जिनको नहीं
कारवाने इश्क चलते रह रहे ॥१०॥



पुजारी से

निर्दोष फूल तोड़े, तुमने पूजा के हार बनाने को।
क्यों इनकी हत्या कर डाली अपना देव रिझाने को।।१।।

नहीं देवता खुश होते हैं मूकों के बलिदानों से।
अरे पुजारी नहीं भरेगी यह झोली वरदानों से।।२।।

लता वृक्ष के इन फूलों ने नाजुक से दिल पाये हैं।
हृदयहीन निष्ठुर तूने अब तक ये खूब सताये हैं।।३।।

भोली भाली इन कलियों पर तूने हाथ उठाये हैं।
किसके कहने बहकाने से उल्टे कदम बढ़ाये हैं।।४।।

नन्हीं कलियों फूलों को नहीं तुमने और सताना है।
छोड़ो निठुराई करो प्यार भगवान् यदि अब पाना है।।५।।



लहर

मैं हूँ सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुमसे कह दूँ निज जीवन की हलचल।
तुम देख रहे हो कैसे मैं प्रतिक्षण तट से टकराती हूँ,
वह विशाल और सुदृढ़ है पर तो भी ना घबराती हूँ,
तट से टक्कर खा मिटती हूँ मिटकर फिर फिर बन आती हूँ,
क्या चिन्ता हारूँ या जीतूँ मैं तो गाती उछल उछल ।।१।।

मैं हूँ सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुम से कह दूँ निज जीवन की हलचल।
राका में नभ के कानन में ये सुन्दर तारे खिलते हैं
मेरे स्नेहिल संकेतों से आकरके नीचे मिलते हैं
मैं ले लेती हूँ गोद उन्हें वह हँसते हैं मुस्काते हैं
आनन्दविभोर किया करता मुझको भी उनका प्यार विमल ।।२।।

मैं हूँ सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुम से कह दूँ निज जीवन की हलचल
इतने में राकापति मेरी, बिखरी अलकें छू जाता है
पुलकित हो उठती हूँ तन में कम्पन सा फिर आ जाता है
मन में गर्वित सा अनुभव कर गा गाकर के इठलाता है
शशि के संग क्रीडाप्रसङ्ग यह चलता रात्रि भर अविरल ।।३।।

मैं हूँ सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुम से कह दूँ निज जीवन की हलचल
रात्रि समाप्त होते ही ये प्रातः समीर उड़ आता है।
कुछ थके थके मेरे तन को धीरे धीरे सहलाता है।
मैं जाती श्रम को भूल तभी उत्साह नया आ जाता है।
फिर हो जाता आरम्भ वही मेरा इठलाना मचल मचल ॥४॥

मैं हूं सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुम से कह दूँ निज जीवन की हलचल।
उषा प्राचीवातायन से जब झांक झांक मुस्काती है।
मैं कह देती हूँ 'हाँ' किरणों के संग तभी वह आती है।
क्षण भर में ही रंग बिरंगी ज्योति मुझ पर छा जाती है।
मैं हर्षित हो उठती हूँ तब प्रतिक्षण प्रतिपल रूप बदल ॥५॥

मैं हूँ सरिता की लहर चपल।
आओ रे श्रान्त पथिक तुम से कह दूँ निज जीवन की हलचल।
जीवन की प्याली को मैंने स्मित से भरना सीखा है
कठिनाई की घड़ियों में मुस्काते लड़ना सीखा है
अपना यह उल्लास दूसरों में भी भरना सीखा है
इसके थोड़े से कण मुझसे ले लो तुम हे पथिक विकल ॥६॥

मै हूँ सरिता की लहर चपल।



गीत, पिंजरा और पंछी

तुम्हारे मधुर गीत
मेरे इन सूखे ग्रधरों पर
जब जब थिरकते हैं
तब तब न जाने क्यों
मेरी इन ग्राँखों से
टप टप करते हुए
ग्राँसू गिरने लगते हैं
तुम्हारे गाये गीतों से
निकली हुई नाना वर्णध्वनियाँ
कानों में ग्राकर
घुसती चली जाती हैं
इन ध्वनियों के
साथ साथ ग्राकर
नाना रसों की
ग्रनेकानेक ध्वनियाँ
मन ग्रौर मस्तिष्क में
पैठती चली जाती हैं
ये सब की सब
भीतर ही भीतर
चल चल कर
दिल के पास
पहुँच तो जाती हैं
पर जल्दी ही ये

जलते हुए दिल की
गर्म गर्म लपटों से
घबरा घबरा कर
वापिस निकलने की
कोशिश भी करती हैं
पर क्या इनको
पहले से यह भी
पता नहीं था
कि दिल के ग्रासपास
पहुँचने का ही
रास्ता होता है
निकलने का नहीं
अब इन गीतों की
अनुरणनात्मक
मधुर मधुर ध्वनियों से
न निकलते बनता है
और न ही वहाँ उनसे
रहते बनता है
पर अब धीरज के साथ
वहाँ रहने के अलावा
और कोई दूसरा
इन सब के पास
विकल्प भी तो नहीं है
इसीलिए तो
अपनी बेबसी में

इन सबने
दिल की नगरी के पास ही
रहने के लिए अपना
डेरा डाल लिया है
अब तुम और तुम्हारे गीत
चाहे अनचाहे
मेरे बन गये हैं।
और मैं भी तुम्हारे
इन गीतों के साथ
घुल मिल गया हूँ
जब तक मैंने
तुम्हारे इन गीतों को
सुना नहीं था
तब तक तो मेरे
तन, मन और प्राण
अपने ही पास
अपने ही बस में
रहा ही करते थे
पर अब इन गीतों ने
इनको तो मेरे पास
रहने ही नहीं दिया है
और मैं अब स्वयं
अपने ही पास
रह नहीं पाता हूँ
तुम्हारे मोहक गीतों ने
मुझ नादान को

अस्तित्वहीन और पराधीन
बनाया हुआ है
अब मुझे याद आते हैं
अपने ही वे पुराने दिन
पहले मैं एक
स्वच्छन्द परिन्दा था
मौज ही मौज थी
खुले खुले आसमान में
खूब उड़ा करता था
पर अरी चतुर छलने
तुमने तो अब
अपने गीत सुनाकर
मुझे मोहित करके
पिंजरे में ऐसा
फँसा लिया है
अब यह लोहे का पिंजड़ा ही
मेरा घर और ज़िन्दगी
दोनों बन गया है
मुझे भी अब इससे
मोह हो चला है ।
और अब मैं भी
इससे निकल कर
बाहर नहीं आ सकता
पर फिर भी कभी कभी
जब मैं इसमें से

भूल कर या जानकर
बाहर निकलता हूँ
तो बिना देर लगाये
दुबारा फिर
इसके भीतर लौट जाता हूँ।
ग्रौर इस लौटने में ही
समझता हूँ ग्रपनी जीत
ग्रब मैं ग्रपने पखों से
उड़ना चाहूँ तो भी
उड़ नहीं सकता।
ग्रौर ग्रब उड़ने की मुझे
इच्छा भी नहीं है
मैं यह सोचकर डर जाता हूँ
कि मेरे उड़ने पर लोग
बेसिर पैर की
तरह तरह की ऐसी बातें
मेरे बारे में
कभी न कहें
जिन्हें मैं सह न सकूँ।
वे कहेंगे
देखो यह कैसा पंछी है?
पिंजरे में रहकर भी
पिंजरे से निकलकर
खुले ग्राकाश में
उड़ने की हिम्मत करता है

और देखो तो सही
उड़ते उड़ते
आसमान में इसे
जो भी मिल जाता है
उसके साथ ही
हँस हँस कर
बातें करके
घुलमिल जाता है।
देखी इसकी जुर्रत
देखी इसकी हिम्मत
पर यह तो इसकी
हिम्मत न होकर
परले सिरे की
हिमाकत ही है।
अब मैं लाचार हूँ
इसी पिंजरे में
सदा सदा के लिए
रहते रहने को
हँसकर या रोकर
मुझे इसी में
रहना ही रहना है
बकौल किसी शायर के
'राजी हैं हम उसी में
जिसमें तेरी रज़ा है'

मुझको भी अब
इसी पिंजरे से
मोह सा हो गया है
अब तो मैं
तुम्हारे बनाये
इस पिंजरे का
पंछी बन गया हूँ
जेलखाने के उस कैदी सा
जिसको जेल में ही रहना
स्वाभाविक लगता है
और जेल से बाहर सभी कुछ
सूना सूना लगता है
बाहर की खुली हवा में
जिसका दम घुटता है
तुम्हारे इन गीतों ने
मेरे ऊपर अब तो
कुछ ऐसा जादू सा
कर ही डाला है
जिसके कारण मेरी
इससे बाहर जाने की
न कभी भावना होती है
और न ही कभी कामना
मैं इससे मुक्त होने की
कल्पना तक भी
कभी नहीं कर सकता

बस एक ही चाह अब
अपने मन में बसाये हूँ
तुम्हारे जो गीत
मुझे इस पिंजरे में
फुसलाकर लाये हैं
वे मुझे इसी प्रकार
सदा ही निरन्तर
सुनाई पड़ते रहें
ताकि उन्हें सुनकर
मैं सदा सदा के लिए
इसी पिंजरे में
भूखा रहकर भी
उड़ने का लोभ छोड़कर
चुपचाप पड़ा रहूँ
और तुम भी गीत गा गाकर
मुझे सुना सुनाकर
अपने दिल को
बहलाती रहो
और इसी प्रकार
समय कटते कटते
मेरी यह ज़िन्दगी
इसी पिंजरे के भीतर
कटती चली जाय
और यह सिलसिला
जब तक चले
चलता चला जाय



छब्बीस जनवरी

आज छब्बीस जनवरी यह आई है।
मुक्ति का सन्देश फिर से लाई है ॥१॥

दूसरों का दर्द अपना जान लो।
गैर को भी आप अपना मान लो।
बात इसने हमको ये सिखलाई है ॥२॥

खुद जियें पर और भी जीते रहें।
प्रेम की हाला सदा पीते रहें।
ज़िन्दगी जीने का नुस्खा लाई है ॥३॥

अपनी रक्षा आप करना सीख लो।
राष्ट्रहित के भाव भरना सीख लो।
देश पर मिटना सिखाने आई हैं ॥४॥

नींद अपनी क्यों नहीं अब छोड़ते ?
रूढ़ियों को क्यों नहीं अब तोड़ते ?
भाई से क्यों लड़ रहा अब भाई है ॥५॥

आपसी अब वैर घटना चाहिए।
अब नहीं यह देश बटना चाहिए।
भाई का हर भाई आखिर भाई है ॥६॥

दिवाली

आज दिवाली है
क्या असली दिवाली है ?
यह भी हो सकता है कि
यह नकली दिवाली हो
यह बड़ी बहरूपिया है
मुझे यह पता नहीं चलता
यह अच्छी है या बुरी
यदि यह सुन्दर है
और अच्छी नारी है
तो यह सचमुच दिवाली है
जब यह राम को प्रेरित करती है
ऊँचे से ऊँचे काम करने को
तब यह सच्ची दिवाली है
और अच्छे दिलवाली है
पर जब यह मारीच को
देती है प्रेरणा
कपटी मृग बनकर
रावण से सीता को
चुरवा कर लंका ले जाने को

तब यह औरत

असली दिवाली न रहकर
नकली दिवाली बन जाती है
और इसका दिल भी
काला हो जाता है
और यह तब सबका
दिवाला निकाल देती है।
मेरे दिल में
दिलवालों को देखकर
प्यार उमड़ा करता है
और दिल के कालों को देख
पैदा हो जाती है
बड़ी भारी नफ़रत
पर मेरे प्यार को पाकर
न तो दिल वालों पर
कोई असर होता है
और न ही दिल के कालों पर
दोनों ही नखरेबाज़ हैं
दोनों को ही मेरी
बिल्कुल भी परवाह नहीं है
ये दोनों के दोनों
समझदार समझते हैं अपने को
और मुझको मानते हैं
बुद्धू, अपाहिज, लाचार और जाहिल
इसीलिए सदा से मनमानियाँ
करते आये हैं

श्रौर श्रब भी ऐसा ही किया करते हैं
दुनियाँ के श्रच्छे श्रौर बुरे
बड़े श्रौर छोटे
सभी लोगों से
मैंने बड़ी बड़ी उमीदें रखी हैं
पर इन सभी ने
मेरी उमीदों पर
बेशर्मी से
पानी ही फेरा है
बकौल ग़ालिब के
मुझे भी यह कहना पड़ता है
हम श्राह भी भरते हैं
हो जाते हैं बदनाम
वे कत्ल भी करते हैं
शिकवा नहीं होता
पर इन की बेरुखी से
इनकी बेवफ़ाई से
हम पर क्या बीतती है
यह तो हम ही जानते हैं
हम श्रौर तो कुछ नहीं करते
बस श्राह भर लेते हैं
जब श्रपना ही भाग्य खोटा है
यह सोचकर श्रपने को
दिलासा दे लिया करते हैं
जिनको हमारी परवाह नहीं है
हम भी उनकी परवाह करें क्यों ?

पहले देवासुर संग्राम होते थे
देवता लड़ते थे असुरों से
और असुर देवों से लड़े
देवता स्वर्ग से उतरकर
असुर पाताल से निकलकर
आमने सामने
जी जान से लड़ते थे
आदमी भी अपने जैसों से
बुरी तरह भिड़ते थे
सभी इस परम सत्य को
अच्छी तरह जानते थे
न तो शस्त्र हमें काट सकता है
और न ही आग हम को जलायेगी
यदि तुम युद्ध में मारे जाते हो
तो तुम्हें स्वर्ग मिलेगा
यदि ज़िन्दा रहे तो
पृथ्वी के सारे भोग मिलेंगे
अपने लिये लड़ने वाले
इन बड़ी आत्माओं का
हृदय का अमृत कुण्ड
इनके मरे हुए शरीरों को
फिर से जिला देता है
और ये बार बार ज़िन्दा होकर
अपने छोटे छोटे स्वार्थ के लिए
फिर से लड़ने लगते हैं

लड़ने के अलावा इस दुनियाँ में
और भी ज़रूरी काम हैं
इस बात की ओर
ज़रा सा भी
ग़ौर नहीं किया करते हैं
अपनी हवस पूरी करने के सिवाय
दूसरों की भलाई की ओर
भूलकर भी नहीं
देखा करते हैं
इनके कारनामों को देख
मेरे हृदय की वीणा
बेसुरी हो जाती है
या बिल्कुल ही
बजना बन्द कर देती है
आज इस दिवाली की
रंगीन रोशनी को देख
मेरे दिल को
फिर न जाने
क्या हो रहा है
मेरी हृदय वीणा के
सारे के सारे तार
ढीले ढीले होकर
बेसुरे हो गये हैं
बहुत बार इनसे
बहुत सुरीली और प्यारी

आवाज़ें निकली हैं
और हर बार ऐसा लगा
कि न जाने कितनी देर तक
मुझे यह अनोखा सुर
सुनाई देता रहेगा
किन्तु न जाने क्यों
थोड़ी देर बाद ही
यह सुरीला सुर
बन्द हो जाता था
और आज भी यह
बन्द होने लगा है
पुराना यही नियम
आज भी मुझे
ठीक मालूम पड़ रहा है
चार दिन की चाँदनी
और फिर अँधेरी रात
पर फिर भी मेरे दिल में
आशा की किरण बनी ही रहती है
मैंने अपनी वीणा को
और इसके पतले तारों को
बड़े यतन के साथ
सँभाल कर रखा है
मैं ऐसे समय की प्रतीक्षा में हूँ
जब ऐसा मौका आये
यह लगातार बजती जाये

रुकने का नाम न ले
यह बात तभी हो सकती है
जब ऐसी कयामत आये
जब दुनिया के उन लोगों की
जो सिर्फ अपने ही
स्वार्थ के लिए लड़ते हैं
परमार्थ का केवल दम भरते हैं
उनके नश्वर शरीर के साथ
उनकी आत्मायें भी
सदा सदा के लिए
खतम हो जायें
और तब इस धरती पर
शुद्ध ही शुद्ध
आत्माओं का वास हो
केवल अपने लिए जीने वालों की
बेकार आत्माओं का
नरक या स्वर्ग में ही
सदा के लिए वास हो
इस भूतल पर
सच्ची दिवाली आकर रहेगी
और मेरे हृदय की वीणा
सदा सदा ही बजती रहेगी।



हिन्दी और हिन्दी

हम हिन्दी हैं
क्योंकि हम हिन्द के वासी हैं
हम हिन्द के लोगों की एक बड़ी जो भाषा है
वही तो राजभाषा है
उसका भी नाम हिन्दी है
और इस प्रकार हम हिन्दी
जब तब हिन्दी भी बोल लेते हैं
पर क्या करें हम हिन्दी भी
अजीब ही मतवाले हैं
कहने को तो हमारी

सब कुछ हिन्दी है
पर अपने ही घर में
अपने ही लोगों से
अपनी ही बोली में
बातचीत करने में
सख़्त पाबन्दी है
कुत्ते और बिल्ली को
गधे और घोड़े को
अपनी ही भाषा में
रोने और हँसने की
खुली इजाज़त है
पर अपने इस हिन्द में
अपनी ही भाषा में
हँसने और हँसाने की
रोने और रुलाने की
सख़्त मनाही है
अपनी इस सुन्दर
गुणवती हिन्दी को
हम अपने से कोसों दूर रखते हैं
हिन्दी को डुबोकर
अपने को जीवित रखने का
हमेशा हमेशा ही
दम भरते हैं
दूसरों को मारकर

खुद जीते रहने की
ऊँची से ऊँची
बड़ी से बड़ी
आशा हम करते हैं
पर आज तक
क्या कोई भी जाति
कोई सा भी देश
माँ, बहिन और पत्नी को
ज़िन्दा जलाकर
ज़िन्दा डुबाकर
ज़िन्दा बचा है ?
पर सभी वे लोग
जो औरों को
अपने लिए
मारा करते हैं
दूसरे मर सकते हैं
पर हम तो सदा सदा
ज़िन्दा ही रहेंगे
ऐसी ही आशा में
अपनी ज़िन्दगी
गुज़ारा करते हैं
पर इस सबमें
हमारा तो कोई भी कसूर
दीखता नहीं है

क्योंकि हम सबने
जो भी कुछ सीखा है
वह सब ही इतिहास से
अच्छी तरह सीखा है
क्या हमारे ही
मर्यादा पुरुषोत्तम
भगवान् राम ने
अपनी सुन्दर और शिष्ट पत्नी को
धोबी के कहने से
घर से बाहर कर
वन में नहीं भेजा था
हम तो अपने ही
रजकों के कहने से
हिन्दी सीता को
चालीस साल का
वनवास दे चुके हैं
और अब तक भी
सम्मान के साथ
इस आज की सीता को
वापिस बुलाने को
बिल्कुल भी
तैयार ही नहीं हैं
और हमें शायद
यही देखने की
बड़ी भारी इच्छा है

कि लव कुश ग्रायेंगे
ग्रौर वे ग्राकर
हमारी सेना के
मुँह को पीटेंगे
ग्रौर ग्रपनी माता को
सम्मानपूर्वक
फिर ग्रयोध्या में
धूमधाम के साथ
लेकर ग्रायेंगे
ग्रभी ग्रौर भी ग्रनेक
ऐसे महापुरुष हैं
जिन्होंने हमें
बड़े बड़े
सबक सिखाये हैं
धर्मराज युधिष्ठिर ने
पहले ग्रपने को हारकर
फिर ग्रपनी द्रौपदी को
जुए में दाव पर लगा कर
दुर्योधन के हाथों से
ग्रपमानित करवाया था
पर कृष्ण भगवान् ने
द्वारिका से ग्राकर
उसी द्रौपदी की
लाज बचाई थी
पिता के कहने से
क्रोधी परशुराम ने

अपनी ही माता को
परशु से मारा था
उसी मुनिराज को
राम और लक्ष्मण ने
भरे दरबार में
सभी के सामने
ज़ोर से ललकारा था
अपनी ही बहिन देवकी को
अपने ही भाई कंस ने
बेड़ियों से बाँधा था
कृष्ण ने आकर
जेल की कैद से
उसको छुड़ाया था
आज की यह देवी हिन्दी माता
अपने ही भक्तों से
बुरी तरह पीड़ित है
हम अपनी इस हिन्दी के
ऐसे संरक्षक हैं
अपने और अपने बन्धुओं के
मरने और जीने के
मुण्डन और ब्याह के
निमन्त्रण पत्रों को
हिन्दी में न छपाकर
विदेशी भाषा में
छपवाते फिरते हैं

खुद बचे रहकर
अपने ही बच्चों को
हिन्दी की छाया से
वञ्चित रखते हैं
न बचायें तो
उनको हिन्दी की
बुरी हवा लग जाएगी
चाची और ताई का
आदर करना तो
बहुत ही अच्छा है
पर अपनी ही माँ का
घर और बाहर
अनादर करना भी
कहाँ तक अच्छा है?
अब हमने भी सोचा है
अपनी इस हिन्दी माँ के
सारे के सारे
बन्धनों को खोलेंगे
तभी तो हम माँ के
सच्चे सपूत कहलायेंगे
वरना हम भी माँ के
भयङ्कर शाप से
सागर में डूबेंगे
और यहाँ से सीधे
और कहीं न जाकर
जहन्नुम में जायेंगे।



शरीर और आत्मा नश्वर बनें

आत्मा नित्य है, शरीर अनित्य है
इस पार्थिव शरीर को छोड़कर
इस सारी जगती से मुँह मोड़कर
पापी हो या धर्मात्मा
सबकी ही आत्मा
पुण्य या पाप से
स्वर्ग या नरक में
जाती ही रहती हैं
शस्त्र इनकी आत्मा का
खात्मा नहीं करते हैं
इसीलिए तो इस पृथिवी के
रणबांकुरे शूरवीर
युद्ध में ही मरते हैं
स्वर्ग में ही जाते हैं

ग्रौर यहाँ सारे ही पापी
सारे ही जीवन में
पाप ही बटोरते हैं
ग्रगले जनम में
नरक में जाकर
ग्रपने ही कर्मों के
फलों को भोगते हैं
युद्धों ग्रौर चुनावों में
जीत जिनकी होती है
वे बहादुर विजेता ग्रौर नेता
इस महती वसुधा पर
खूब मजे लूटते हैं।
इसीलिए इस धरा पर
देवता मनुष्य ग्रौर राक्षस
एक दूसरे के
ग्रामने ग्रौर सामने
नित्य ग्रा ग्राकर
जी जान से
लड़ते ही रहते हैं
युद्ध में लड़कर स्वर्ग में जाने की
जल्दी मचाते हैं।
यदि ज़िन्दा रहे तो
पृथिवी के सारे भोग मिलेंगे
इसीलिए तो लड़ने में

अपनी शान समझते हैं
सभी अच्छी आत्मायें
अपने अपने पार्थिव शरीर को
छोड़ने के बाद
सीधे स्वर्ग चली जाती हैं
और एक बार वहां पहुँचकर
फिर लौटने का नाम नहीं लेती हैं
अगर कभी फिर भूतल पर
उनका आगमन भी होता है
तो बड़ी खुशामद के बाद ही
अच्छे आदमी को स्वर्ग जाने को
तैयार देखकर मैं रुकने को कहता हूँ
जरा सी देर तो ठहरो
और सुनो मेरी बात
यदि तुम सारे ही स्वर्ग चले गये
तो हमारा क्या बनेगा ?
किन्तु वे सबके सब
मेरी प्रार्थना को ठुकराकर
मुझसे पीछा छुड़ाकर
जल्दी से जल्दी
स्वर्ग चले जाते हैं।
एक भी अच्छा देव
एक भी अच्छा आदमी
हम आम लोगों के साथ

भूतल पर रहने को
बिल्कुल भी तैयार
होता ही नहीं है ।
इसी कारण समय समय पर
देवता और सत्पुरुषों से रहित
यह पृथिवी भरी रही है असुरों से
किन्तु राक्षसों को इस लोक से
जाने की तो कोई
जल्दी ही नहीं
वह बहुत निश्चिन्त और निर्द्वन्द्व हो
इस लोक में स्वच्छन्द घूमते हैं
क्योंकि उन्हें भी पता है इस ध्रुव सत्य का
चाहे कोई देवता हो या राक्षस
चाहे वह आदमी हो या औरत
आत्मा तो सबकी अमर है
और जब तक हम ज़िन्दा हैं
तब तक हमारा यह शरीर
टिका ही रहेगा
और मरने के बाद
हमारी यह आत्मा
अमर ही रहेगी
किसी को सदा के लिए
न दुःख मिलता है और न ही सुख
इसलिए जब तक हम ज़िन्दा हैं

खूब सुख से रहकर
अपने दुश्मनों को मारकर
राजसुख भोगेंगे
संसार के सुखों को बिना भोगे तो
मूर्ख आदमी और स्वार्थी देवता ही
स्वर्ग में पहुँचने की
जल्दी किया करते हैं
किन्तु हम असुर लोग
निस्स्वार्थ और निश्चिन्त होकर
हमेशा हमेशा के लिए
इस मनुष्यलोक की ही
सेवा किया करते हैं
लाखों राम भी आकर
एक अकेले वीर रावण की
अजर अमर और अविनाशी
नित्य आत्मा की
हत्या नहीं कर सकते ।
हज़ारों कृष्णों की भी
क्या मजाल है
कि वे आकर
पूतना और कंस की
उन आत्माओं का
खात्मा कर सकें
वे भले ही ख़त्म हो जायें
वे भले ही अच्छे काम कर

मुक्त हो कर दुबारा न जन्में
पर रावण, कंस और पूतना
सदा से ही जनमते रहे हैं
और आगे भी मर्त्यलोक में आकर
समय समय पर जन्म लिया करेंगे
जब जब मैं इन लोगों की
ऐसी ऐसी बातें सुना करता हूँ
मेरा दिल बैठने लगता है
यही सोचकर कि
मेरा अन्त भले ही हो जाय
पर इनका अन्त तो
कभी नहीं होगा।
फिर कभी जब मैं यह सुनता हूँ कि
अब इन लोगों को मारने वाले
राम और कृष्ण
पैदा हो गये हैं
और उन्होंने
इन सबको मार दिया है।
तो मेरी हृदयतन्त्री के तार
थोड़ी देर के लिए
झनझना उठते हैं
और कुछ समय के लिए उनसे
मधुर ध्वनि भी निकलती है
मैं सोचने लग जाता हूँ

कि अब बात बदलने वाली है
राम विभीषण और उग्रसेन को
अब राजगद्दी मिलने वाली है
पर थोड़ी ही देर में
मेरे इस मन का
भ्रम टूट जाता है
और मुझे समझ में आ जाता है
अब बात बदलने वाली नहीं
रावण की प्रचण्ड आत्मा के
हृदय का अमृतकुण्ड
उसके मरे हुए शरीर को नहीं
और राक्षसों को भी
फिर से जिला देता है
यह सब देखकर
मेरी वीणा के तार
थोड़ी देर बजकर फिर
लम्बे समय तक
बजते ही नहीं हैं।
इसी कारण मेरी हृदय वीणा
या तो बजती नहीं हैं
अगर बजती है तो
बेसुरी रहती है।
किन्तु मैंने अभी तक
अपनी इस वीणा को
बचाया हुआ है
यह आशा लेकर

कि एक ऐसा भी
समय आ सकता है
जब यह ऐसी बजे
कि इसे रुकने का
मौका ही न मिले
सुर और लय भी ठीक रहें
इस नये सत्य को देखकर
कि इस दुनिया में
दुष्टात्माओं के
शरीर तो नश्वर हैं ही
उनकी आत्मा भी
नष्ट होने वाली हैं।
बची है मेरी अब
एक ही अभिलाषा
कि काश हमारे शरीर की तरह
हमारी आत्मा भी नश्वर हो
जिससे बुरों की आत्मा
बुरे शरीरों के साथ
सदा सदा के लिए
खत्म होती जायें
और इस प्रकार सभी
शरीर और आत्मा
दोनों के दोनों
नश्वर बन जायें



लोहड़ी में शिशिर

शिशिर कड़वा है तेरा नाम
कार्य भी दीख रहा निस्सार।
फिर भी लोहड़ी पर तेरे
स्वागत को उमड़ा क्यों संसार ?

रूखा रूखा पवन यह तेरा, बहता है मदमत्त मचलता।
तोड़ गिराता पीले पत्ते, कफ़न धूलि का उन पर पड़ता॥
लतिकाओं ने जिन पुष्पों से, जी भर कर शृङ्गार किया था।
आज उन्हीं को सुखा उड़ा, दरशाता है अपनी निर्ममता॥
तुम्हें सुहानी लगती है क्या लतिका की खाली भुज डार ?

नहीं दिखाई देते हैं अब, कमलों से परिपूर्ण सरोवर
नहीं प्रकट होता है सुमनों, कलिकाओं का रूप निखर कर
पीले आँसू गिरा रहे हैं, लतिकाओं के सहचर तरुवर
नहीं तितलियाँ कहीं नाचतीं नहीं सुनाते भौंरे मृदुस्वर
इस उदास बस्ती में फिर क्यों नृत्य गीत की यह झंकार ?

सुनो, शिशिर हूँ मैं तुम को रूखा लगता है मेरा वेश ।
पर मैं तो लेकर आया हूँ, नववसन्त का नवसन्देश ।।
धूल मिले इन पीले पत्तों की नाहक चिन्ता करते हो ।
अभी नई कलिकाओं से भी आमोदित होगा यह देश ।।
इसी लिए लोहड़ी पर स्वागत करता है मेरा संसार ।

इन नीरस सूखे पीले पत्तों को आखिर चलना ही था ।
खिल खिल कर मुरझाये पुष्पों को भी आखिर गिरना ही था ।।
यौवन इनका बीत चुका था, जीर्ण जरा में ही बैठे थे ।
फिर नई कोपलों की खातिर डालों को खाली करना ही था ।।
मैं नहीं, सृष्टि का क्रम ही था, वह इन्हें गिराने को लाचार ।

शैशव यौवन जरा औ, मृत्यु स्वाभाविक यह सब परिवर्तन ।
जीवन के बाद पुनः मरना, मरने के बाद पुनः जीवन ।।
उस जीवन का आनन्द ही क्या जिसमें मृत्यु की नींद नहीं ।
मृत्यु भी तो विश्राम ही है, नव जीवन का है आमन्त्रण ।।
जीवन से नेह निभालो तुम है, मृत्यु से भी फिर कर लो प्यार ।



स्वतन्त्रतादिवस

कोटिजन ने प्राण दे पाया तुम्हें
प्राणदायक पर्व तुम आते रहो ।
भूमिका बलिदान की तुमसे जुड़ी
नित नये अध्याय लिखवाते रहो ।।१।।

बहुत काली बहुत लम्बी रात थी
विवशता की घुटन की अभिशाप की ।
बन्धनों में आह भरती सिसकती
मातृभू के कष्ट की सन्ताप की ।।
आये तुम आलोक नभ में छा गया
और चमकी सूर्य की पहली किरण ।
हम ने देखे माँ के बन्धन टूटते
साथ देखी कटते अंगों की दुखन ।।
मन की पीड़ा को दबा हम हँस लिए
ताकि तुम निश्चिन्त मुस्काते रहो ।।२।।

तुम को खिलते देखने की चाह में
झड़ गये खिलने से पहले कई सुमन ।
भगतसिंह आज़ाद बिस्मिल सैंकड़ों
झूम कर करते रहे मृत्यु वरण ।।
ताकि भारत देश की यह पौध नई
उगे पनपे साँस आज़ादी की ले ।
टूटे न अरमान बचपन का कोई
सपना यौवन का न तिल तिलकर जले ।।

वीर जिन पगडंडियों पर मर मिटे
तुम वहां मेलों को लगवाते रहो ।।३।।

आज पैरों में नहीं हैं बेड़ियां
और हाथों में नहीं है हथकड़ी ।
देश के निर्माण का पथ है खुला
कोई बाधा राह रोके ना खड़ी ।।
आज मेरे देश की स्वाधीनता
पार कर शैशव जवानी में बढ़ी ।
फिर भला क्यों हो उदासी अत्र यहाँ
दीनता को छोड़ने की है घड़ी ।।
सो गये तो भाग्य भी सो जायेगा
यह ज़रा सी बात समझाते रहो ।।४।।

जन्म ले स्वाधीन धरती में पले
युवक मस्ती में ना लम्बी तान लें ।
तिलक गाँधी गोखले के शिष्यगण
मातृभू को मिट्टी ही ना मान लें ।।
मातृभूमिप्रेम तो बलिदान है
कोई भी व्यापार इसको न बनाये ।
माँ का उजला औ, धुला आँचल है यह,
दाग़ मैला द्रोह का लगने न पाए ।।
देश के गौरव बढ़ाने के लिए
स्वार्थों का त्याग सिखलाते रहो ।।५।।



सीमाहीन मानस

मानस की परिधि सीमाहीन
भावी अतीत औ' वर्तमान पल पल होते इस में विलीन ॥१॥
शैशव की भोली क्रीडायें
जिन में था मचल रहा हर क्षण
निष्कपट स्नेह की वीणा पर
जीवन संगीत मधुर पावन
वे जीवित हैं तब तक मन में जब तक न स्मृतियां हुईं क्षीण ॥२॥
मानस की परिधि सीमाहीन ।

सुन विश्व जिन्हें कहता प्रलाप
सपने भविष्य के वे सुन्दर
जो कौन जानता कब टूटें
खा कर यथार्थ की इक ठोकर
उन सपनों के रंगीन चित्र इस मानसभू पर हैं विकीर्ण ।
मानस की परिधि सीमाहीन ।
इस की ही दी मुस्कानों से
खिल जाते हैं ये अधरसुमन
यह ही करुणा का भरा स्रोत
कर देता अश्रुपूर्ण नयन
क्रन्दन गायन औ, हास्य रुदन का कोष तनिक न हुआ क्षीण ।
मानस की परिधि सीमाहीन
यह श्रद्धा का आसन पावन
है मूल सभी विश्वासों का
अभिलाषाओं का कारण है
औ, निःश्वासों का
सुख दुःख की स्मृति संजोने में यह रहता है उन्मत्त लीन ।
मानस की परिधि सीमाहीन ।
अब वर्तमान ही क्यों भूला
जब भूला नहीं भविष्य, भूत
देखो तो भूत भविष्यत् के
कल कल में ही है आज स्यूत
फिर मानस की धरती विशाल क्यों वर्तमान के लिए दीन
मानस की परिधि सीमाहीन ।



तीस जनवरी

बापू के निर्वाण दिवस तुम मानवता को आज जगाओ।
मानव के भीतर जागी इस दानवता को दूर भगाओ ।।१।।

आज धरा पर विपदाओं की
घोर घटायें घिर आई हैं
स्वार्थभाव की भीषण लपटें
विश्व निगलने को आई हैं
राजनीति आ रंगमंच पर
नाच नये नित दिखलाती है
नाम धर्म का पाठ वैर का
मूर्ख बनाकर सिखलाती हैं
संघर्षों की धधकी ज्वाला प्यारे बापू अभी बुझाओ ।।२।।

मानव आज रक्त मानव का
पीने को तैयार हुआ है
प्रभु की करुणामयी सृष्टि पर
यम का क्रूर प्रहार हुआ है
टूट रहे हैं स्नेहिल बन्धन
प्रेमभाव अब नहीं दीखता
हिंसा प्रलयंकरी देखकर
हर मानव का हृदय चीखता
तुम आकर भूले भटकों को राह अहिंसा की दिखलाओ ॥३॥

आज उपेक्षित शोषित निर्धन
भूख की अग्नि में जलते हैं
राष्ट्रभाग्य के निर्माता शिशु
सूखे टुकड़ों पर पलते हैं
पैदल जनता के नेता गण
वायुयान में ही चलते हैं
थोथे थोथे भाषण देकर
भोली जनता को छलते हैं
क्रूर विषमता की विषवल्ली पनपरही है इसे मिटाओ ॥४॥



अभिलाषा

वेद की ज्योति जले और दूर हो अज्ञान सारा
खेत वन सड़कें कहें बस, ओम् ही जीवन हमारा ॥१॥

आज हम सब आर्य जन क्यों नींद में ही सो रहे हैं।
हो विमुख कर्तव्य से क्यों भार भू पर हो रहे हैं?
अब ऋषि हमको जगाने कैसे आयेंगे दुबारा? ॥२॥

ओम् के सम्बल को पाकर प्रेम से मिलकर चलें हम।
ओम् के ही गीत गाकर जग को खुशियों से भरें हम।
कूल तक उमड़े हमारे प्रेम की अश्रान्त धारा ॥३॥

ओम् की लेकर पताका आर्य हम चलते ही जायें।
ऋषिप्रदर्शित मार्ग पर सबके कदम बढ़ते ही जायें।
धन की खातिर धर्म अपना हिन्दू ना बेचे हमारा ॥४॥

देहरक्षा के लिए हम सैर करने रोज़ जायें।
सन्ध्या करने के लिए भी प्रभुशरण में रोज़ आयें।
मन लगाकर फिर करें हम काम दिन का जो हमारा ॥५॥

खाने पीने में हो संयम, जगने सोने में हो सयम
मिलने जुलने में हो संयम, रोने हंसने में हो संयम।
अपनी सीमा में चलें हम हो सफल जीवन हमारा ॥६॥

अच्छे अच्छे काम करके जग में अपना मान रख लें।
ऊँचा ऊँचा नाम पाकर देश का सम्मान रख लें।
फिर से भारतवर्ष का इस विश्व में चमके सितारा ॥७॥

काम कोई भी करें पर धर्म अपना याद रक्खें।
हिन्दुओं की शान को और आन को भी याद रक्खें।
खौफ़ हमको हो न कोई ईश है रक्षक हमारा ॥८॥

आने को हम तक सवेरा खुद ब खुद मजबूर होवे।
रात काली बीत जाये और अँधेरा दूर होवे।
आफ़तों से हम लड़ें जगदीश का पाकर सहारा ॥९॥

जो चले मंज़िल पै उसके पाँव मंज़िल चूमती है।
मस्त होकर के सफलता उसके आगे झूमती है।
हिम्मती राही हैं पाते राह का अन्तिम किनारा ॥१०॥

अपना अपना दाना चुगकर पछी वापिस जा रहे हैं।
जो गये हैं फिर यहाँ वे लौटकर ना आ रहे हैं।
काम ऐसे करके जायें नाम हो जिनसे हमारा ॥११॥



मेरे गीत तुम्हारे गीत

वैदिक ऋषियों ने
उपनिषत् के मुनियों ने
देवी देवताओं के
स्तुतिगीत गाये हैं
पुराने नये महाकवियों ने
मन की तुष्टि, कान्त कान्ता की सन्तुष्टि,
राजा प्रजा के मनोरञ्जन के लिए
बड़े बड़े काव्य, महाकाव्य, नाटक
रच डाले हैं, और दे दिया है
कान्तासम्मित उपदेश
और जगद्व्यापी भगवान् विष्णु की तरह
उनकी कृतियों में
समाविष्ट है
रसो वै सः अर्थात्
रस रूप ब्रह्म
इसीलिए इनके श्रवण और प्रेक्षण से
मिलता है ब्रह्मानन्दसहोदर रसास्वाद
उन रससिद्ध कवियों का

स्मरण करके मैंने और तुमने
कुछ उनके और कुछ अपने
भावों को लेकर
उन्हें दिये हैं शब्दों के परिधान
बस ये भाव ये शब्द ही
मेरे गीत तुम्हारे गीत
बनकर आये हैं
और इन्हें मैंने
जाने अनजाने
स्वत: सहज भाव से
आरम्भ किया है गुनगुनाना
और इस गुनगुनाने में
ये गीत परस्पर
संश्लिष्ट हो गये हैं
और अब इनमें
ये गीत मेरा है
या ये गीत तुम्हारा है
यह सब पहिचानना
कठिन हो गया है
क्योंकि अब ये सारे गीत
मिलकरके हो गये हैं एक
भगवान् अर्धनारीश्वर शङ्कर की
उस देहयष्टि की तरह
जिसमें नारीत्व और पुरुषत्व
परस्पर संयुक्त होकर

हो गया है एकाकार
और जिसमें पार्वती और परमेश्वर की
अलग अलग पहिचान
हुआ ही नहीं करती
उनके हाव मनोभाव भी
पृथक् पृथक् रूप में
नहीं जाने जा सकते
अब इन मिले जुले गीतों में
यह नहीं पता चलता—
संयोग किसका है
वियोग किसका है ?
मुस्कान किन अधरों की है
अश्रु किन नयनों के हैं ?
व्रीडा किस मुख की है
पीड़ा किस हृदय की है ?
प्रणयकोप किसका है
मनुहार किसकी है ?
अलङ्करण किसका है
श्रृङ्गार किसका है ?
फिर भला अब
इन गीतों के भीतर
कैसे पहिचानें ये सब कि
शब्द किसके हैं ?
अर्थ किसके हैं ?
तुम ही बताओ

क्या तुमने कभी
शब्द का अस्तित्व
अर्थ के बिना देखा है
सम्प्रेषणीयता से रहित
अर्थहीन शब्द
आत्मविहीन शरीर की भाँति
टिकते हैं क्या ?
अर्थ की अभिव्यक्ति भी क्या
शब्द के बिना होती है ?
अर्थाभिव्यक्ति को तो
पदस्फोट ही जन्म देता है
इस प्रकार अर्थप्रकाशनात्मिका शक्ति का
शब्द ही आधार है
और इनमें यह आधाराधेयभाव
नित्य बना रहता है
फिर भला इन गीतों के
ये शब्द और अर्थ
अलग अलग कैसे ?
देख रहे हो तुम
बसोहली के किसी
गुमनाम चित्रकार का यह चित्र
इसमें ऊपर है नीला आकाश
नीचे उगी है हरी हरी घास
बीच में खड़ी है दूध सी सफेद गाय
और उसीके पार्श्व में

भोले बछड़े की रस्सी पकड़े
खड़ी है मन्त्रमुग्धा राधा
और प्रेमी कृष्ण की दृष्टि
गोदोहन व्यापार से हटकर
जा टिकी है प्रेमिका के चन्द्रवदन पर
और अपनी पूंछ उठाए बछड़ा ?
बड़ी ललक के साथ
देख रहा है पँवासी माँ के
दुग्ध भरे थनों की ओर
यहाँ वात्सल्य और शृङ्गार नामक
रसों का मिश्रण है
इन दोनों को एक दूसरे से
कैसे अलग करें
और अलग भी क्यों करें
इस व्यङ्ग्य भरे चित्र में
वर्ण किसके हैं
तूलिका किसकी है
यह सब जानकर
होगा भी क्या ?
वर्णों के बिना कागज़ पर
तूलिका नहीं चलती है
और तूलिका के बिना वर्णों की
चमक नहीं उभरती है
तूलिका और वर्ण
कागज़ पर उतरकर

अपने द्वैत को समाप्त कर
अद्वैत को अङ्कित करते हैं
भेद को मिटाकर
अभेद सर्जन करते हैं
ये वर्ण वर्तना और अलङ्करण
सब मिलकर रचते हैं नई रचना
अमूर्त मूर्त हो जाता है
जड़ चेतन बन जाता है
और इस प्रकार आकृति में
हो जाती है प्राण प्रतिष्ठा
और देख रहे हो यह सुकुमार नृत्य
सुन रहे हो नुपूरों की झङ्कार
सैंकड़ों करणों से युक्त बत्तीस अङ्गहार
सब मिलकर कर रहे हैं
एक ही रस की निष्पत्ति
अब यह भरतनृत्य
मयूरललित है या गज क्रीडितक
कुञ्चित है या अञ्चित
थिरकती अङ्गुलियों की नानामुद्रायें
चञ्चल पदचापों के नाना प्रकार
कौन देखता इनको अलग अलग ?
कौन पहिचानता इनको अलग थलग ?
सनासर की घाटी में
दूर पर्वतशिखर से
चीड़ों और दयारों के बीच से

आती हुई इस बांसुरी की तान को
ध्यान से सुनो तो
प्रकम्पित स्वरलहरियों के
मन्द्र, मध्यम, तार
कितने ही उतार चढ़ाव
इस मधुर तान में आ मिले हैं
और यह तान भी
पत्तों की सरसराहट से मिलती हुई
निर्झर की झर्झर ध्वनि से खेलती हुई
आ पहुँची है यहाँ तक
अनेक स्वरलहरियों से निर्मित
है तो यह सुरीली तान एक ही
पढ़ी है तुमने कालिदास की
अमरकृति अभिज्ञानशाकुन्तल
जहाँ स्वर्ग और धरा
मिल गये हैं एक रेखा पर आकर
और प्रकृति के प्राङ्गण में पली
नायिका शकुन्तला
बंध गई है नायक दुष्यन्त के प्रणयसूत्र में
विभाव, अनुभाव, सञ्चारिभाव
आ मिले हैं स्थायिभाव से
और हो गई है अलौकिक रस की सृष्टि
जैसे यह रस
एक और अखण्ड है
वैसे ही मेरे और तुम्हारे गीत

एक और अखण्ड हैं
जैसे नायक और नायिका
बारी बारी से
आलम्बन और आश्रय बना करते हैं
वैसे ही हम दोनों भी
अनेकानेक भावों के
आलम्बन और आश्रय
बनते चले आये हैं
और हमारे अलग अलग अनुभूत भाव
मिल मिल कर एक होते आए हैं
मैंने अपने हृदय के भाव
इन गीतों के माध्यम से
अटपटी और अस्पष्ट भाषा में
प्रकट कर दिये हैं
पर मुझे कुछ ऐसा लगता है
कि इन गीतों के भाव
इन गीतों की भाषा
और इन गीतों के विषय
मेरे नहीं तुम्हारे भी हैं
और तुमने मेरे लिए
जो गीत
यदा कदा गाये हैं सुनाये हैं
उनके भाव, भाषा और विषय भी
मुझसे उधार लेकर मुझे ही लौटाये हैं
और मैंने भी जाने अनजाने

ऐसा ही किया है
और इस प्रक्रिया के चलते रहने से
मेरे और तुम्हारे गीतों का
स्वतन्त्र अस्तित्व मिट सा गया है
अपनी अस्मिता और पहिचान को
पूरी तरह खोकर
ये हो गए हैं एक
और इनकी यह एकता
मुझे बेहद पसन्द है
और यह एकत्व
शास्त्रीय प्रमाणों से भी
प्रमाणित हो जाता है ।
जैसे साङ्ख्य के प्रकृति और पुरुष
अन्धपङ्गुन्याय से करते हैं जीवनयात्रा
और जैसे वेदान्त के माया और ब्रह्म
इस व्यावहारिक दृश्यमान जगत् की
मिलकर करते हैं सृष्टि
वैसे ही मेरे गीत तुम्हारे गीत
चल रहे हैं अपने गन्तव्य की ओर
जहाँ व्यष्टि और समष्टि का
कोई भेद नहीं रहता
और फिर रहता है केवल
उनका एक ही समन्वित रूप
और इस अखण्ड रूप को
गीत नाम देना ही

पर्याप्त सा लगता है
मेरे और तुम्हारे विशेषण
व्यर्थ प्रतीत होते हैं
ये मेरे हों या तुम्हारे हों
इससे कोई फर्क नहीं पड़ता
पारमार्थिक दृष्टि से तो
ये केवल गीत हैं
अब तुम्हीं बताओ
मेरे गीत तुम्हारे गीत का
केवल गीत नाम ही कैसा रहेगा ?



कविपरिचय एवं रचनायें

वेदकुमारी

जन्मस्थान	जम्मू तवी, जम्मूकश्मीर राज्य
शिक्षा	एम० ए० (संस्कृत) एम० ए० (प्राचीन इतिहास एवं भारतीय सस्कृति) पी०एच० डी० (संस्कृत) प्रभाकर (हिन्दी) प्राज्ञ (संस्कृत) डिप्लोमा (जर्मन तथा डैनिश) रिसर्च स्कालर (कोपेनहेगन यूनिवर्सिटी, डेन्मार्क)
शिक्षाक्षेत्र	सस्कृतविभागाध्यक्षा, गवर्नमैन्ट कालेज फार वीमैन (१९५१–१९६२) सस्कृतविभागाध्यक्षा, जम्मू विश्व-विद्यालय (१९६३--१९८५) प्रवक्त्री एवं प्रवाचिका सं० वि० ज० वि० (१९६३–१९७३) ग्राचार्या तथा सङ्कायाध्यक्षा ज० वि० (१९७३–१९८६) ग्राचार्या एवं यू०जी०सी० नैशनल फैलो (१९८६—)

रचनायें

1. The Nilamata Purana : A Cultural Study Vol. I — Rs. 15.00
   The Nilamata Purana : Text with English Translation Vol. II — Rs. 30.00
   Motilal Banarasidass Bunglow Road, Jawahar Nagar, Delhi–7.

2. सांस्कृतिक और साहित्यिक निबन्ध
(वेदकुमारी रामप्रताप) ७ रु० ५० पैसे
भारतीय विद्याप्रकाशन, कचौड़ी गली,
वाराणसी

3. राजेन्द्रकर्णपूरः (हिन्दीभाषानुवादसहित)
(वेदकुमारी रामप्रताप) ७ रु० ५० पैसे
१७३, रघुनाथपुरा, जम्मू तवी

4. कश्मीरदर्पण
(निबन्धसङ्कलन) ४ रु०
डोगरी रिसर्च इन्स्टीच्यूट, रघुनाथमन्दिर,
जम्मू

5. नरेन्द्रदर्पण (नरेन्द्र खजूरिया का डोगरी
कवितासङ्ग्रह) ४ रु०
डोगरी संस्था, कर्णनगर, जम्मू

6. भल्लटशतक
(संस्कृतटीका, हिन्दी एवं अंग्रेजी अनुवाद) २० रु०
(वेदकुमारी रामप्रताप)
मेहरचन्द लछमनदास पब्लिकेशन्स, दरियागंज,
नई दिल्ली

7. ऊर्मिका (संस्कृतकवितासङ्ग्रहः) १५ रु०
वेदकुमारी रामप्रताप
ऋचा प्रकाशन १७३, रघुनाथपुरा, जम्मू तवी

8. मेरे गीत तुम्हारे गीत (हिन्दीकवितासङ्ग्रह) १५ रु०
(वेदकुमारी रामप्रताप)
ऋचा प्रकाशन १७३, रघुनाथपुरा जम्मू तवी

9. पाण्डुलिपिविज्ञान (पाठालोचन सम्बन्धी निबन्ध) १० रु०
विश्वसंस्कृतप्रतिष्ठान १७३, रघुनाथपुरा, जम्मू

10. कश्मीर का संस्कृतसाहित्य को योगदान (प्रैस में)
जम्मू कश्मीर एकाडमी ऑफ कल्चर ऐण्ड लैंग्वेजेज़
कैनाल रोड, जम्मू तवी

रामप्रताप

जन्मस्थान	दादरी, ज़ि० गाज़ियाबाद उत्तरप्रदेश
शिक्षा	वेदालङ्कार, एम० ए० (संस्कृत), पी एच० डी० (संस्कृत) साहित्याचार्य
शिक्षाक्षेत्र	प्रवक्ता, विश्वेश्वरानन्द विश्वबन्धु पोस्ट ग्रेजुएट इन्स्टिट्यूट, पंजाब यूनिवर्सिटी, होशियारपुर (१९६२–१९६४) प्रवक्ता एवं प्रवाचक सं०वि०ज०वि० (१९६४–१९८६) प्रोफेसर संस्कृत विभाग जम्मू विश्वविद्यालय (१९८७–)

रचनायें

1. पुराणानां काव्यरूपताया विवेचनम् २५ रु०
(शोधप्रबन्ध)
रजिस्ट्रार, जम्मू विश्वविद्यालय जम्मू तवी

2. साहित्यसुधासिन्धु : ३७ रु०
(काव्यशास्त्रीय कृति का मूलपाठ, हिन्दी अनुवाद, अंग्रेज़ी भूमिका, आलोचनात्मक सस्करण)
भारतीय विद्याप्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली